International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 30-03-2019; Accepted: 01-05-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 4; July 2019; Page No. 04-07

फीजी की हिंदी कविता में प्रवासी संवेदना

Subashni Shareen Lata
Research Scholar, DOS in Hindi, University of Mysore, Mysore, Karnataka, India

सारांश
फीजी द्वीप में प्रवासी भारतीयों का इतिहास लगभग 140 वर्ष पुराना है। सन् 1879 से सन् 1916 तक कुल 87 यात्राओं में 60,965 मजदूर फीजी ले जाए गए थे। गिरमिट प्रथा की समाप्ति पश्चात अधिकतर गिरमिटियाँ वहीं फीजी में ही बस गए। उन्नीसवीं शताब्दी में भारत से बिछड़े इन गिरमिटिया मजदूरों ने अपना देश तो त्यागा परन्तु अपनी भाषिक परंपरा और सांस्कृतिक संपत्ति को कठिन काल में भी कायम रखा। इन प्रवासी कवियों ने अपनी रचनाधर्मिता से हिंदी साहित्य को सघन बनाने के साथ-साथ पाठक वर्ग को प्रवास की संस्कृति, संस्कार एवं उस भूभाग से जुड़े लोगों की स्थिति और संवेदनाओं से अवगत कराने का कार्य किया है। भारतवंशियों की मर्मस्पर्शी अनुभवों से गठित होने वाली अनुभूतियों से संवलित उनकी कविताओं में विस्थापन की पीड़ा, स्वदेश प्रेम, अपनों से बिछड़ने का दर्द, अस्तित्व द्वंद्व, जीवन संघर्ष, जीवन परिवर्तन, आदि संवेदनाएं चित्रित हैं।

मूल शब्द : प्रवासी, भारतवंशी, संवेदना, विस्थापन, गिरमिटिया।

प्रस्तावना
विदेशों में भारतवंशियों की प्रवासन की प्रक्रिया के साथ ही हिंदी भाषा और साहित्य भारत्तेर देशों में पहुँची। एक ओर जहाँ भारतीयों ने विदेशों को अपनी कर्मभूमि बनाया तो वहीं दूसरी ओर हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति की ध्वजा भी लहराई। आज हिंदी भाषा और साहित्य का क्षेत्र व्यापक होता जा रहा है और यह भारत में ही नहीं बल्कि फीजी, मॉरीशस, सुरिनाम, त्रिनिडाड, दक्षिण अफ्रीका, कैनाडा आदि भारत्तेर देशों में बसे प्रवासी भारतीयों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है। प्रवासी हिंदी साहित्य दिन-प्रति-दिन अपनी रचनाधर्मिता से हिंदी साहित्य को सघन बनाने के साथ-साथ पाठक वर्ग को प्रवास की संस्कृति, संस्कार एवं उस भूभाग से जुड़े लोगों की स्थिति और संवेदनाओं से अवगत कराने का कार्य कर रहा है।

फीजी द्वीप में प्रवासी भारतीयों का इतिहास लगभग 140 वर्ष पुराना है। फीजी को आधिकारिक रूप से फीजी द्वीप समूह गणराज्य के नाम से जाना जाता है। दक्षिण पश्चिम प्रशान्त महासागर के मध्य में स्थित यह द्वीप देश ऑस्ट्रेलिया से लगभग 3000 किलोमीटर और न्यूज़ीलैंड से लगभग 2000 किलोमीटर की दूरी पर है। फीजी जाने वाले भारतीय प्रवासियों से संबंधित दस्तावेजों के आधार पर डॉ. प्रमोद कुमार, फीजी के प्रवासी भारतीयों के संदर्भ में इन तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं- "करार बद्ध व्यवस्था के अनुसार भारतीय मजदूरों का सबसे पहला जत्था 1879 में 'लियोनिदास' नामक जहाज से फीजी गया था। इस जत्थे में कुल 481 मजदूर थे। 1879 से 1916 तक इस प्रकार की कुल 87 यात्राओं में 60,965 मजदूर फीजी गए थे।"[1] भारत की इमपिरियल लेजिस्लेटिव कॉन्सिल के प्रस्ताव के पर 20 मार्च 1916 में गिरमिट प्रथा का अंत हो गया और भारतीयों ने स्वतंत्रता की सांस ली। काफी भारतीय मजदूर गिरमिट प्रथा का अंत होने पर यही फीजी में ही बस गए। फीजी एक बहुजातिय और बहुसांस्कृतिक देश है जहाँ पर प्रमुख जातियाँ फीजियन और हिन्दुस्तानी हैं। देश की आबादी में 56.8% फीजियन, 37.5% हिन्दुस्तानी, 1.2% रोतुमन और 4.5% अन्य जातियाँ शामिल हैं।[2]

मानव चाहे अमीर हो या गरीब, शिक्षित हो या निरक्षर, सामान्य नागरिक हो या महापरुष वह अभिव्यक्ति चाहता है। कहा जाता है, सुख बाँटने से बढ़ता है और दुख बाँटने से कम होता है। प्रवासी साहित्यकारों ने अपनी संवेदनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम हिंदी की सभी विधाओं को बनाया है, लेकिन प्रवासी कविता की अपनी अलग छाप रही है। इन कविताओं में प्रवास की पीड़ा, स्वदेश प्रेम, अपनों से बिछड़ने का दर्द, अस्तित्व द्वंद्व, नारी मन के विविध पहलुओं की अभिव्यक्ति, जीवन संघर्ष, जीवन परिवर्तन, आदि भाव चित्रित हुए हैं। फीजी की महिला रचनाकारों में सबसे अधिक चर्चित नाम अमरजीत कौर का है। अमरजीत कौर खालसा कॉलेज में संगीत और हिंदी की अध्यापिका रह चुकी हैं और वह फीजी की प्रसिद्ध कवयित्री हैं। उनकी तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं : 'चलो चले उस पार', 'उपहार' और 'स्वर्णिम सांझ'। प्रवास की पीड़ा को उन्होंने निकटता से देखा है ओर महसूस भी किया है। एक भारतीय स्त्री जो ब्रिटिश एजेंटों द्वारा

बहला–फुसलाकर गन्ने के खेतों में काम करने के लिए फीजी आई थी, फीजी पहुँचकर जब विपरीत स्थिति देखती है तो दुखी हो जाती है, उसे लगता है कि वह छली गई है। उसकी पीड़ा इन शब्दों में कवयित्री अमरजीत कौर ने व्यक्त की है-

फिरंगिया के राजुआ मा छूटा मोरा देसुआ हो
गोरी सरकार चली चाल रे बिदेसिया
भोली हमें देख आरकाटी भरमाया हो
कलकत्ता पार जाओ पाँच साल रे बिदेसिया...
कुदाली, कुरबाल दीना हाथुआ मा हमरे हो
घाम मा पसीनुआ बहाए रे बिदेसिया[3]

उपरोक्त बिदेसिया गीत गिरमिटिया नारी की व्यथा का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती है। अपने जीवन के दुखों को वह इस बिदेसिया गीत द्वारा अभिव्यक्त करती है। कवयित्री अमरजीत कौर के इस बिदेसिया गीत में गिरमिट काल का दुख-दर्द सिमटा हुआ है।

फीजी के अन्य रचनाकारों ने भी अपनी रचनाओं में अपने पूर्वजों के गिरमिट जीवन की स्मृतियों को अंकित किया है। डॉ. विवेकानंद शर्मा (1937-2006) एक शिक्षक, नेता, धार्मिक प्रचारक के साथ ही फीजी तथा विदेश में हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए जाने जाते हैं। फीजी में हिंदी के हस्ताक्षर डॉ. नेतराम शर्मा गिरमिटिया श्रमिकों के इतिहास को 'गिरमिट की कहानी' कविता में लिखते हैं-

छोड़कर आए थे अपना प्यारा देश
हरयाली ही मिलेगी चलो फीजी प्रदेश
सब्ज बाग दिखाए धोखेबाज थे कुछ कर्मचारी
क्या पता था परिश्रम से होगी यहाँ खेती बारी
तड़के सुबह ही सबको कुलम्बर थे जगाते
दिनभर मेहनत कर बस शाम को ही घर आते
कठिन परिश्रम अनिवार्य था धूप हो या छाँव
ऐसे में भारत याद आता सगे संबंधी व गाँव [4]

डॉ. नेतराम शर्मा ने इस कविता में एक ओर गिरमिटिया श्रमिकों के कष्टों को दर्शाया है तथा दूसरी ओर घर, सगे संबंधी व गाँव की याद या फिर अतीत के परिवेश में विचरते भावनाओं को दर्शाया है। पराए देश में जाकर वहाँ की सभ्यता एवं संस्कृति के साथ तालमेल बिठाना सरल नहीं होता, यहाँ व्यक्ति को कई आंतरिक और बाह्य समस्याओं से गुजरना पड़ता है। ऐसे में विदेश गया व्यक्ति 'नॉस्टेल्जिया' का शिकार हो जाता है। अर्थात् प्रवासी को अपने घर, राज्य या राष्ट्र के प्रति एक मोहोविष्ट स्थिति नज़र आती है।

इस प्रकार की संवेदनाएं सिर्फ पद्य में ही नहीं विद्यमान है बल्कि गद्य साहित्य में भी इन संवेदनाओं को दर्शाया गया है। पं. तोताराम सनाढ्य भारत से 1893 में एक करारबद्ध मजदूर के रूप में फीजी लाए गए थे। फीजी में बंधुआ मजदूर के रूप में उनसे काम कराया गया किन्तु वे अपने अधिकारों के लिए निडर होकर संघर्ष करते रहे। करार की अवधि समाप्त होने पर उन्होंने फीजी में एक किसान और पुजारी का जीवन शुरू किया और उसके साथ-साथ अपना अधिकांश समय उन लोगों की सहायता में लगा दिया जो बंधुआ मजदूर के रूप में वहाँ काम कर रहे थे। वे भारतीय नेताओं के सम्पर्क में रहे और भारत से भारतीय शिक्षक, वकील, कार्यकर्ता आदि भेजने का अनुरोध किया ताकि फीजी के भारतीय लोगों की दुर्दशा को कम किया जा सके। फीजी में 21 वर्ष रहने के बाद 1914 में वे भारत लौटे तथा फीजी में अपने अनुभवों को 'फीजी द्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' नामक पुस्तक में प्रकाशित किया। "कुली प्रथा के विरुद्ध आंदोलन में इस पुस्तक ने बड़ी सहायता दी है। मिस्टर एंड्रूज ने इस पुस्तक के संबंध में लिखा कि, 'मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि शर्तबंदी की गुलामी उठा देने में इस पुस्तक से बड़ी भारी सहायता मिलेगी'।[5] 'फीजी द्वीप में मेरे इक्कीस वर्ष' एक गिरमिटिया श्रमिक के दृष्टिकोण से लिखी पहली कृति रही जो फीजी की करारबद्ध मजदूरी की प्रथा को समाप्त करने के लिए बहुत सहायक सिद्ध हुई।

अपनी भूमि को छोड़कर गया व्यक्ति पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रवासी ही रहता है। प्रवासी मन में प्रवास की पीड़ा इस संशय के साथ भी रहती है कि नई दुनिया उसके लिए अधिक अच्छी है कि नहीं। एक ओर वह अपनी भाषा, संस्कृति व जीवन मूल्यों को पकड़े रहना चाहता है क्योंकि परदेश में वहीं उसके अस्तित्व की पहचान है। तो वहीं दूसरी ओर उसके मन में नए देश को अपनाने की दुविधा तथा विवशता बनी रहती है क्योंकि यही उसकी नई जमीन है। इसी मूल संवेदना को फीजी के कवियों ने दर्शाया है। पंडित कमला प्रसाद मिश्र हिंदी जगत के एक जाज्वल्यमान सितारे हैं जिन्होंने हिंदी के प्रति अपनी तपस्या से लोगों को सदैव प्रवाभित किया। पंडित जी की काव्य रचनाएँ 'ताजमहल', 'सुमन', 'पंछी', 'गिरमिट के समय' आदि सरल, सहज और सुबोद काव्यात्मक भाषा की कृतियाँ हैं जो फीजी में हिंदी काव्य की दिशा निर्धारित करती आ रही हैं। वे जीवन भर साहित्य-साधना में तल्लीन रहे और कविता ही उनकी जीवन संगिनी बनी रहीं। इसलिए आपको फीजी का राष्ट्रीय कवि कहा जाता है। फीजी के राष्ट्रकवि कमला प्रसाद मिश्र की कविता 'क्या मैं परदेशी हूँ ?' में फीजी के प्रवासी भारतीयों के अस्तित्व के सवाल को उठाया गया हैं-

धवल सिंधु-तट पर मैं बैठा अपना मानस बहलाता
फीजी में पैदा होकर फिर भी मैं परदेशी कहलाता
यह है गोरी नीती, मुझे सब भारतीय अब भी कहते
यद्यपि तन मन धन से मेरा फीजी से ही नाता है
भारत के जीवन से फीजी के जीवन में अंतर है
भारत कितनी दूर वहाँ कौन सदा आता-जाता [6]

'क्या मैं परदेशी हूँ?' यह प्रश्न फीजी के प्रवासी भारतीयों का है और हमेशा से ही प्रवासी भारतीयों के मस्तिष्क में देश और अस्तित्व को लेकर द्वंद्व उत्पन्न करता आ रहा है। यहाँ कवि विदेश में खुद को पराया महसूस कर रहा है। परदेश में जन्मे जाने के बावजूद वहाँ के लोगों ने उसे पराया ही माना जबकि कवि तन और मन से फीजी से जुड़ चुका है और अब यही उसका निवास है। कवि कमला प्रसाद मिश्र की भाँति अन्य कवियों ने भी इस पराएपन को महसूस किया है और काव्य में इस संवेदना को अभिव्यक्त किया है।

फीजी के हिंदी साहित्य जगत में श्री जोगिन्द्र सिंह कंवल एक युगांतर उपस्थित कर देने वाले रचनाकार के रूप में अवतरित हुए हैं। कंवल जी ने अनेक साहित्यिक विधाओं में उत्कृष्ट रचनाएँ प्रदान की है जो फीजी में हिंदी भाषा शिक्षण और साहित्यिक अध्ययन के लिए महान साधक रहे हैं। उन्होंने फीजी के समकालीन जन-जीवन पर कई संवेदनात्मक कविताएं लिखी हैं जो निम्नलिखित रचनाओं में संकलित है:- 'यादों की खुशबू' (1984), 'कुछ पत्ते कुछ पंखुडियाँ' (1996) और 'दर्द अपने-अपने' (2001)। कंवल कंवल जी की कविता 'सात सागर पार' पराएपन की संवेदना को दर्शाते हैं-

सात सागर पार करके भी ठिकाना न मिला
सौ साल प्यार करके भी निभाना न मिला
कई जनमों से तो बिछड़े थे एक मां से हम
दूसरी मां के आंचल में भी सिर छिपाना न मिला
पीढ़ियां खेली हैं ऐ देश तेरी गोद में
फिर भी तेरी ममता का हमें नजराना न मिला
हम ने बंजर धरती में खिला दिए रंगीन फूल
तेरी पूजा के लिये दो फूल चढ़ाना न मिला [7]

यह कविता एक ओर पराएपन की भावनाओं को प्रकट करती है तो दूसरी ओर यथार्थ की वीभत्स जमीन को भी उजागर करती है। इस कविता में फीजी के भारतीयों का देश के साथ जुड़े उनके अस्पष्ट रिश्ते को दर्शाती है। कंवल जी ने काव्य के अलावा 'सवेरा', 'धरती मेरी माता', 'करवट' जैसे उपन्यासों में फीजी के भारतीयों के इतिहास, सामाजिक, आर्थिक ,सांस्कृतिक और कही नैतिकता का तो कही मनोवैज्ञानिक स्थितियों का उल्लेख कथा-सूत्र में पिरोकर पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। उनकी 'कुछ पत्ते कुछ पंखुड़ियाँ' काव्य संग्रह अपने समय के परिस्तिथियों और अनुभावों का सच्चा दस्तावेज़ है। 'दर्द अपने–अपने' काव्य संग्रह फीजी के उन सभी लोगों को समर्पित है जो 19 मई 2000 के कू (coup) की आँधी में उजड़ने–उखड़ने के बाद आज भी उन दर्द की परछाइयों में जी रहे हैं।

प्रवासी भारतीयों के जीवन सफ़र की विषमताओं का यथार्थ चित्र उन्होंने अपनी कविता 'हम भारतीयों को' में इस प्रकार खींचा हैं –

लम्बे सफ़र में हम भारतियों को
कभी पत्थर कभी मिले बबूल
कभी मिट जाती कभी जम जाती
इतिहास के दर्पण पे धूल
कभी रम्बूका कू कर बैठा
कभी स्पेट ने वार किया ...
उबड़-खाबड़ पगडण्डियों को
बड़े गौरव से पार किया।।[8]

संवेदना को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने शब्दों में व्यक्त किया है। डॉ. नागेन्द्र के अनुसार, मूलतः संवेदना का अर्थ है, 'ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभव अथवा ज्ञान'। [9] अर्थात् साहित्यिक संदर्भ में संवेदनशीलता मन की प्रतिक्रिया की शक्ति है जिसके द्वारा संवेदनशील व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को समझकर उससे अपना तदात्मय स्थापित कर लेता है। संवेदनशील व्यक्ति जिस वातावरण में रहते हैं उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। वे लोगों के दुख में उनके साथ रोते हैं और उनके सुख में सुखी भी होते हैं। कोई भी लेखक अपने लोगों से अलग रहकर और उनके दुख-दर्द से परे होकर, उनकी तकलीफों से मुहँ मोड़कर प्रभावशाली साहित्य की रचना नहीं कर सकता। 'दर्द अपने अपने' काव्य संग्रह की भूमिका में फीजी के प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री कंवल, जोगिन्द्र सिंह कहते हैः-

> "जमीन के मालिक गरीब आसामियों को अपनी जमीनों से निकाल रहे हैं, उनके घर उजड़ रहे हो या देश के लोगों को आंधी और तूफ़ान ने तोड़ दिया हो और कवि किसी पहाड़ की चोटी पर बैठकर अपने व्यक्तिगत प्यार की कविता-कहानियाँ लिखता रहे तो वह बड़ा स्वार्थी इंसान होगा ।"[10]

निष्कर्षतः

यह कह सकते है कि फीजी के कवियों ने अपनी रचनाओं में प्रवासी भारतीयों के अनुभवों, भावनाओं, मानवीय संवेदनाओं को सफलतापूर्वक स्थान दिया है। इन कवियों ने इतिहास को खंगालते हुए, इतिहास के निर्जीव तथ्यों को अपनी रचनात्मकता से प्राण फूंक कर जीवंत किया हैं। ये कविताएं प्रवासी भारतीयों की संवेदनाओं को स्वर प्रदान करते हुए उनकी घुटन, विस्थापन के दर्द, अस्मिता का द्वंद्व, जमीन की समस्या, प्रवास की पीड़ा को दर्शाते हैं।

संदर्भ सूची

1. कुमार, डॉ. प्रमोद, "हिंदी का प्रवासी साहित्य" (सं. प्रो. कालीचरण 'स्नेही'), आराधना ब्रदर्स, कानपुर, 2018, पृ.19.

2. Worldometers. Fiji. Retrieved from http://www.worldometers.info/world-population/fiji-population/.
3. कौर, अमरजीत, “फीजी का हिंदी काव्य साहित्य”, (सं. जोगिन्द्र सिंह कंवल), भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, 2004, पृ.10.
4. शर्मा, डॉ. नेतराम , “फीजी का हिंदी काव्य साहित्य”, (सं. जोगिन्द्र सिंह कंवल), भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, 2004, पृ.104.
5. चतुर्वेदी, बनारसीदास. गद्य कोश- “फिजीद्वीप में मेरे 21 वर्ष” - भाग 1, तोताराम सनाढ्य Retrieved from- https://www.adyakosh.org/gk/फिजीद्वीप_में_मेरे_21_वर्ष_/_भाग_1_/_तोताराम_सनाढ्य .
6. मिश्र, कमला प्रसाद, “फीजी का हिंदी काव्य साहित्य”, (सं. जोगिन्द्र सिंह कंवल), भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद, 2004, पृ.16
7. भारत दर्शन, ‘जोगिन्द्र सिंह कंवल’- Retrieved from https://www.bharatdarshan.co.nz/magazine/literature/825/saat-sagar-paar-fiji-kavita.html .
8. कंवल, जोगिन्द्र सिंह, “दर्द अपने अपने”, डायमंड पब्लिकेशन्स. 2001, पृ. 22.
9. डॉ. नागेन्द्र, “मानविकी परिभाषा शब्दकोश”, (साहित्य खंड). पृ. 232.
10. कंवल, जोगिन्द्र सिंह, “दर्द अपने अपने”, डायमंड पब्लिकेशन्स. 2001, पृ.14.